4

भारतीय कला और स्थापत्य में मौर्योत्तर कालीन प्रवृत्तियाँ

ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी के बाद अनेक शासकों ने विशाल मौर्य साम्राज्य में अलग-अलग हिस्सों पर अपना नियंत्रण स्थापित कर लिया। इनमें उत्तर भारत में और मध्य भारत के कुछ हिस्सों में शुंग, कण्व, कुशाण और गुप्त शासकों ने अपना आधिपत्य जमा लिया तो दक्षिणी तथा पश्चिमी भारत में सातवाहनों, इक्ष्वाकुओं, अभीरों और वाकाटकों ने अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया। संयोगवश, ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में सनातन धर्म के दो मुख्य संप्रदायों—वैष्णव धर्म और शैव धर्म—का भी उदय हुआ। भारत में ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी के ऐसे अनेक स्थल हैं जिनका उल्लेख करना विषय की दृष्टि से उपयुक्त होगा। मूर्तिकला के कुछ उत्कृष्ट उदाहरण (नमूने) विदिशा, भरहुत (मध्य प्रदेश), बोधगया (बिहार), जगय्यपेट (आन्ध्र प्रदेश), मथुरा (उत्तर प्रदेश), खंडगिरि-उदयगिरि (ओडिशा), भज (पुणे के निकट) और पावनी (नागपुर के निकट), महाराष्ट्र में पाए गए हैं।

यक्षिणी, भरहुत

भरहुत

भरहुत में पाई गईं मूर्तियाँ मौर्य कालीन यक्ष और यक्षिणी की प्रतिमाओं की तरह दीर्घाकार (लंबी) हैं। प्रतिमाओं के आयतन के निर्माण में कम उभार है लेकिन रैखिकता का ध्यान रखा गया है। आकृतियाँ चित्र की सतह से ज्यादा उभरी नहीं हैं। आख्यानात्मक उभार में तीन आयामों का भ्रम एक ओर झुके हुए परिप्रेक्ष्य के साथ दर्शाया गया है। आख्यान में स्पष्टत: मुख्य-मुख्य घटनाओं के चुनाव से बढ़ गई है। भरहुत में आख्यान फलक अपेक्षाकृत कम पात्रों के साथ दिखाए गए हैं, लेकिन ज्यों-ज्यों समय आगे बढ़ता जाता है, कहानी के मुख्य पात्रों के अलावा अन्य पात्र भी चित्र की परिधि में प्रकट होने लगते हैं। कभी-कभी एक भौगोलिक स्थान पर अधिक घटनाएँ चित्र की परिधि में एक साथ चित्रित की गई हैं, जबकि कहीं-कहीं एक घटना को संपूर्ण चित्र में चित्रित किया गया है।

मूर्तिकारों द्वारा उपलब्ध स्थान का अधिकतम उपयोग किया गया है। आख्यान/कथानक में यक्ष तथा यक्षिणियों के जुड़े हुए हाथ की तथा अकेली आकृतियों में हाथों को चपटा और छाती से लगा हुआ दिखाया गया है। लेकिन कुछ मामलों में, खासतौर पर बाद वाले समय में, हाथों को सहज रूप में छाती से आगे बढ़ा हुआ दिखाया गया है। इन उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि कलाशिल्पियों को, जोकि सामूहिक स्तर पर काम करते थे, उत्कीर्णन की विधि को समझना कितना ज़रूरी होता था। प्रारंभ में, सतह को तैयार करना प्रमुख कार्य होता था और उसके बाद मानव शरीर तथा अन्य रूपों को उकेरा या बनाया जाता

© NCERT not to be republished

था। चित्र की सतह के छिछले उत्कीर्णन के कारण हाथों और पैरों को बाहर निकला हुआ दिखाना संभव नहीं था, इसीलिए हाथों को जुड़ा हुआ और पैरों को बढ़ा हुआ दिखाया गया है। शरीर ज्यादातर कड़ा तथा तना हुआ दिखाई पड़ता है और भुजाएँ व पैर शरीर के साथ-साथ चिपके हुए से दिखाए गए हैं। किन्तु आगे चलकर ऐसी दृश्य प्रस्तुति में संशोधन कर दिया गया। आकृतियों का उत्कीर्णन गहरा होने लगा और आयतन बढ़ गया जिससे मनुष्यों तथा जानवरों के शरीर का प्रतिरूपण असली जैसा होने लगा। भरहुत, बोधगया, साँची स्तूप-2 और जगय्यपेट में पाई गई मूर्तियाँ इस शैली के अच्छे उदाहरण हैं।

भरहुत की आख्यान उद्धृतियों (रिलीफ) से यह स्पष्ट प्रकट होता है कि कलाशिल्पी अपनी चित्रात्मक भाषा के माध्यम से कितने अधिक प्रभावशाली ढंग से अपनी कहानियाँ कह सकते थे। एक ऐसी ही आख्यान उद्धृति में सिद्धार्थ गौतम की माता महारानी मायादेवी के एक स्वप्न की घटना को दिखाया गया है। इसमें महारानी की आकृति को लेटी अवस्था में और एक हाथी को ऊपर से उतरकर महारानी मायादेवी की कोख (गर्भाशय) की ओर बढ़ते हुए दिखाया गया है। दूसरी ओर, जातक कथाओं का चित्रण बड़े सरल तरीके से किया गया है। उनमें कथा के भौगोलिक स्थल के अनुसार घटनाओं को प्रस्तुत किया गया है, जैसे—रूरू जातक में बोधिसत्व हिरन को एक आदमी की जान बचाने के लिए उसे अपनी पीठ पर ले जाते हुए दिखाया गया है। इसी चित्र में एक अन्य घटना में एक राजा को अपनी सेना के साथ खड़ा हुआ दिखाया गया है। राजा हिरन पर तीर छोड़ने ही वाला है और जिस आदमी की हिरन ने रक्षा की थी, उसे भी राजा के साथ खड़े हुए अपनी अंगुली से हिरन की ओर इशारा करते हुए दिखाया गया है। कथा के अनुसार, आदमी ने बचाए जाने के बाद हिरन को वचन दिया था कि वह किसी भी व्यक्ति को उसकी पहचान नहीं

जातक, भरहुत

महारानी माया का स्वप्न, भरहुत

बताएगा लेकिन जब राजा हिरन की पहचान बताने वाले को पुरस्कार देने की घोषणा करता है तो वह आदमी अपने वचनों से फिर जाता है और राजा को उसी जंगल में ले जाता है, जहाँ हिरन ने उसकी जान बचाई थी। ऐसी जातक कथाएँ स्तूपों को अलंकृत करने के लिए उपयोग में लाई गई हैं। यह जान लेना भी दिलचस्प होगा कि विभिन्न प्रदेशों में ज्यों-ज्यों स्तूपों का निर्माण बढ़ता गया, उनकी शैलियों में भी अंतर आने लगे। ईसा पूर्व पहली और दूसरी शताब्दियों की सभी पुरुष प्रतिमाओं में केश सज्जा को गुंथे हुए दिखाया गया है। कुछ मूर्तियों में तो यह सब जगह एक-सी पाई जाती है। भरहुत में पाई गईं कुछ मूर्तियाँ आज भारतीय संग्रहालय, कोलकाता में सुरक्षित रखी देखी जा सकती हैं।

साँची का स्तूप

मूर्तिकला के विकास के अगले चरण को साँची के स्तूप-1, मथुरा और आंध्र प्रदेश के गुंटूर जिले के वेन्गी स्थान पर पाई जाने वाली मूर्तियों में देखा जा सकता है। यह चरण शैलीगत प्रगति की दृष्टि से उल्लेखनीय है। साँची के स्तूप-1 में ऊपर और नीचे दो प्रदक्षिणा पथ हैं। इसके चार तोरण हैं जो सुंदरता से सजे हुए हैं। इन तोरणों पर बुद्ध के जीवन की घटनाओं और जातक कथाओं के अनेक प्रसंगों को प्रस्तुत किया गया है। प्रतिमाओं का संयोजन अधिक उभारदार है और संपूर्ण अंतराल में भरा हुआ है। हाव-भाव और शारीरिक मुद्राओं का प्रस्तुतीकरण स्वाभाविक है और शरीर के अंग-प्रत्यंग में कोई कठोरता नहीं दिखाई देती। सिर काफ़ी उठे हुए हैं। बाहरी रेखाओं की कठोरता/अनम्यता कम हो गई है। आकृतियों को गति दे दी गई है। आख्यान में विस्तार आ गया है। उकेरने की तकनीकें भरहुत की तुलना

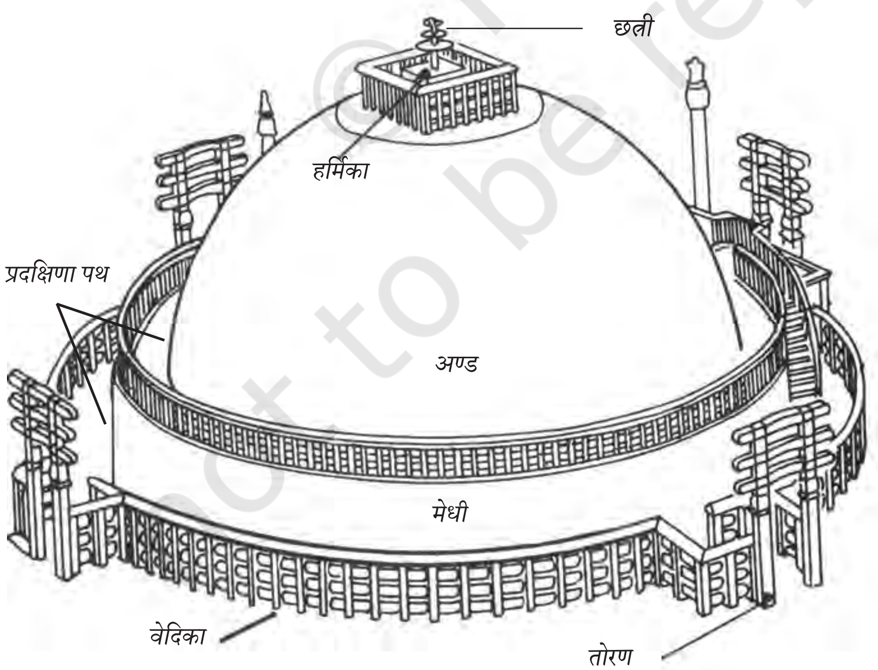

स्तूप-1 की योजना, साँची

में अधिक उन्नत प्रतीत होती हैं। बुद्ध को प्रतीकों के रूप में प्रस्तुत किया जाना अब भी जारी रहा। साँची के स्तूप-1 में आख्यान अधिक विस्तृत कर दिए गए हैं, किन्तु स्वप्न प्रसंग का प्रस्तुतीकरण महारानी को लेटी अवस्था में और ऊपर से उतरते हुए हाथी के चित्रण द्वारा बहुत ही सरल तरीके से किया गया है। कुछ ऐतिहासिक आख्यानों, जैसे कि कुशीनगर की घेराबंदी, बुद्ध का कपिलवस्तु भ्रमण, अशोक द्वारा रामग्राम स्तूप के दर्शन आदि को पर्याप्त विस्तार के साथ प्रस्तुत किया गया है। मथुरा में पाई गई इस काल की प्रतिमाओं में भी ऐसी ही विशेषताएँ पाई जाती हैं, हालांकि उनके रूपाकृतिक यानी अंगों-प्रत्यंगों के प्रस्तुतीकरण में कुछ अंतर है।

उत्कीर्ण आकृतियाँ, स्तूप-1, साँची

जंगले का भाग, संगोल

मथुरा, सारनाथ एवं गांधार

ईसा की पहली शताब्दी में और उसके बाद, उत्तर भारत में गांधार (अब पाकिस्तान में) व मथुरा और दक्षिण भारत में वेन्गी (आंध्र प्रदेश) कला उत्पादन के महत्वपूर्ण केंद्र बन गए। मथुरा और गांधार में बुद्ध के प्रतीकात्मक रूप को मानव रूप मिल गया। गांधार की मूर्तिकला की परंपरा में बैक्ट्रिया, पार्थिया और स्वयं गांधार की स्थानीय परंपरा का संगम हो गया। मथुरा की मूर्तिकला की स्थानीय परंपरा इतनी प्रबल हो गई कि वह उत्तरी भारत के अन्य भागों में भी फैल गई। इसका सबसे बढ़िया उदाहरण हैं पंजाब में संघोल स्थल पर पाई गईं स्तूप की मूर्तियाँ। मथुरा में बुद्ध की प्रतिमाएँ यक्षों की आरंभिक मूर्तियों जैसी बनी हैं, लेकिन गांधार में पाई गईं बुद्ध की प्रतिमाओं में यूनानी शैली की विशेषताएँ पाई जाती हैं। मथुरा में आरंभिक जैन तीर्थंकरों और सम्राटों, विशेषकर कनिष्क की बिना सिर वाली मूर्तियाँ एवं चित्र भी पाए गए हैं।

वैष्णव प्रतिमाएँ (मुख्य रूप से विष्णु और उनके विभिन्न रूपों की प्रतिमाएँ) और शैव प्रतिमाएँ (मुख्य रूप से उनके लिंगों और मुखलिंगों की प्रतिमाएँ) भी मथुरा में पाई गई हैं, लेकिन संख्या की दृष्टि से बुद्ध की प्रतिमाएँ अधिक पाई गई हैं। ध्यान रहे कि विष्णु और शिव की प्रतिमाएँ उनके आयुधों (चक्र और त्रिशूल) के साथ प्रस्तुत की गई हैं। बड़ी प्रतिमाओं के उत्कीर्णन में विशालता दिखाई गई है। आकृतियों का विस्तार चित्र की परिधि से बाहर दिखाया गया है। चेहरे गोल हैं और उन पर मुस्कान दर्शायी गई है। मूर्तियों के आयतन का भारीपन कम कर दिया गया है, उनमें मांसलता दिखाई देती

है। शरीर के वस्त्र स्पष्ट दृष्टि-गोचर होते हैं और वे बाएँ कंधों को ढके हुए हैं। इस काल में, बुद्ध, यक्ष, यक्षिणी, शैव और वैष्णव देवी-देवताओं की प्रतिमाएँ और मानव मूर्तियाँ भी बड़ी संख्या में बनाई गईं। ईसा की दूसरी शताब्दी में, मथुरा में, प्रतिमाओं में विषयासक्ति केंद्रिकता आ गई, गोलाई बढ़ गई और वे अधिक मांसल हो गईं। ईसा की चौथी शताब्दी में भी यह प्रवृत्ति जारी रही, लेकिन चौथी शताब्दी के अंतिम दशकों में विशालता और मांसलता में और कमी कर दी गई और मांसलता में अधिक कसाव आ गया। इनमें कम ओढ़े गए वस्त्रों को दर्शाया गया है। इसके बाद ईसा की पाँचवीं और छठी शताब्दी में वस्त्रों को प्रतिमाओं के परिमाण/आकार में ही शामिल कर दिया गया। बुद्ध की प्रतिमाओं में वस्त्रों की पारदृश्यता स्पष्टत: दृष्टि-गोचर होती है। इस अवधि में, उत्तर भारत में मूर्तिकला के दो महत्वपूर्ण संप्रदायों (घरानों) का उदय हुआ, जिनका उल्लेख करना ज़रूरी है। मूर्तिकला का परंपरागत केंद्र मथुरा तो कला के उत्पादन का मुख्य केंद्र बना ही रहा, उसके साथ ही सारनाथ और कौशाम्बी भी कला उत्पादन के महत्वपूर्ण केंद्रों के रूप में उभर आए। सारनाथ में पाई जाने वाली बौद्ध प्रतिमाओं में दोनों कंधों को वस्त्र से ढका हुआ दिखाया गया है।

ध्यानस्थ बुद्ध, गांधार, तीसरी-चौथी शताब्दी ईसवी

बोधिसत्व, गांधार, पाँचवीं-छठी शताब्दी ईसवी

© NCERT not to be republished

सिर के चारों ओर आभामंडल बना हुआ है जिसमें अलंकरण (सजावट) बहुत कम किया हुआ है जबकि मथुरा में बुद्ध की मूर्तियों में ओढ़ने के वस्त्र की कई तहें दिखाई गई हैं और सिर के चारों ओर के आभामंडल को अत्यधिक सजाया गया है। इन आरंभिक प्रतिमाओं की विशेषताओं का अध्ययन करने के लिए इन्हें मथुरा, सारनाथ, वाराणसी, नयी दिल्ली, चेन्नई, अमरावती आदि के संग्रहालयों में देखा जा सकता है।

गंगा की घाटी से बाहर के स्थलों पर स्थित कुछ महत्वपूर्ण स्तूपों में से एक गुजरात में देवनिमोरी का स्तूप है। परवर्ती शताब्दियों में बहुत कम बदलाव आया है, अलबत्ता प्रतिमाएँ छरहरे या पतले रूप में दिखाई गई हैं और वस्त्रों की पारदर्शिता प्रमुख सौंदर्यानुभूति बनी रही है।

दक्षिण भारतीय बौद्ध स्मारक

आंध्र प्रदेश के वेंगी क्षेत्र में अनेक स्तूप स्थल हैं, जैसे—जगय्यपेट, अमरावती, भट्टीप्रोलुरो, नागार्जुनकोंडा, गोली आदि। अमरावती में एक महाचैत्य है जिसमें अनेक प्रतिमाएँ थीं, जो अब चेन्नई संग्रहालय, अमरावती स्थल के संग्रहालय, नयी दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय और लंदन के ब्रिटिश म्यूज़ियम में सुरक्षित रखी हुई हैं। साँची के स्तूप की तरह अमरावती के स्तूप में भी प्रदक्षिणा पथ है जो वेदिका से ढका हुआ है और वेदिका पर अनेक आख्यानात्मक प्रतिमाएँ निरूपित की गई हैं। गुम्बदी स्तूप का ढाँचा (संरचना) उभारदार स्तूप प्रतिमाओं के चौकों से ढका हुआ है; यह उसकी खास विशेषता है। अमरावती स्तूप का तोरण समय की मार को नहीं झेल सका और गायब हो गया है। बुद्ध के जीवन की घटनाएँ और जातक कथाओं के प्रसंग चित्रित हैं। हालांकि अमरावती के स्तूप में ईसा

स्तूप की बाहरी दीवार पर उत्कीर्णन, अमरावती

स्तूप पटल, अमरावती, द्वितीय शताब्दी ईसवी

not to be republished

पूर्व तीन शताब्दियों के निर्माण कार्य दृष्टि-गोचर होते हैं, लेकिन इसका सर्वोत्तम विकास ईसा की पहली और दूसरी शताब्दी में हुआ। साँची की तरह, इस स्तूप में भी पहले चरण में बुद्ध की प्रतिमाएँ ढोल के चौकों और कई अन्य स्थानों पर उकेरी गई हैं। संयोजन के भीतरी अंतराल में आकृतियों को नाना रूपों, मुद्राओं, आसनों, जैसे—सामने से, पीछे से, आगे से और एक तरफ से दिखाया गया है।

प्रतिमाओं के चेहरों पर तरह-तरह के गंभीर हाव-भाव देखने को मिलते हैं। आकृतियाँ पतली हैं, उनमें गति और शरीर में तीन भंगिमाएँ (त्रिभंग रूप में) दिखाई गई हैं। साँची की प्रतिमाओं की तुलना में इन प्रतिमाओं का संयोजन अधिक जटिल है। रैखिकता में लोच आ गया है और प्रतिमाओं में दर्शाई गई गतिशीलता निश्चलता को दूर कर देती है। उभारदार प्रतिमाओं (उद्धृतियों) में तीन-आयामी अंतराल को तैयार करने का विचार उभरे हुए आयतन, कोणीय शरीर और जटिल अतिव्याप्ति के रूप में कार्यान्वित किया गया है। किन्तु रूप की स्पष्टता पर अधिक ध्यान दिया गया है, भले ही आख्यान में उसका आकार और भूमिका कैसी भी रही हो। आख्यानों का चित्रण बहुतायत से किया गया है। इन आख्यानों से बुद्ध के जीवन की घटनाओं और जातक कथाओं के प्रसंगों को प्रस्तुत किया गया है। फिर भी उनमें ऐसे अनेक जातक दृश्य पाए जाते हैं जिनको पूरी तरह पहचाना नहीं जा सका है। जन्म की घटना के प्रस्तुतीकरण में महारानी मायादेवी को शय्या पर लेटे हुए दिखाया गया है; उनके चारों ओर दासियाँ खड़ी हैं और संयोजन के ऊपरी भाग में एक छोटे से हाथी को दिखाया गया है। यह महारानी मायादेवी के स्वप्न का प्रस्तुतीकरण है। एक अन्य उद्धृति में बुद्ध के जन्म से सम्बंधित चार घटनाएँ दिखाई गई हैं; इससे यह पता चलता है कि आख्यानों को नाना रूपों में चित्रित किया जाता था।

फलक, नागार्जुनकोंडा

NCERT not to be republished

ईसा की तीसरी शताब्दी में नागार्जुनकोंडा और गोली की प्रतिमाओं में आकृतियों की अनुप्राणित गति कम हो जाती है। अमरावती की उद्‌भृत प्रतिमाओं की तुलना में नागार्जुनकोंडा और गोली के कलाकारों ने काया की उभरी हुई सतहों का प्रभाव उत्पन्न करने में सफलता पाई, जो स्वाभाविक है और उसका अभिन्न अंग दिखाई देती है। अमरावती, नागार्जुनकोंडा और गुंटापल्ली (आंध्र प्रदेश) में बुद्ध की स्वतंत्र प्रतिमाएँ भी पाई जाती हैं। गुंटापल्ली में, चट्टान में काटी गई एक गुफ़ा है जो एलुरू के पास स्थित है। यहाँ छोटे गजपृष्ठीय (बहुकोणीय) तथा वृत्ताकार चैत्य कक्ष ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में खोदकर बनाए गए थे। एक अन्य महत्वपूर्ण स्थल जहाँ पर चट्टानों को काटकर स्तूप बनाए गए थे, विशाखापट्टनम के पास अनाकपल्ली है। अब तक खुदाई में मिला सबसे बड़ा स्तूप सन्नति (जनपद गुलबर्ग, कर्नाटक) में है। यहाँ एक ऐसा भी स्तूप है जिसे अमरावती के स्तूप की तरह उभारदार प्रतिमाओं से सजाया गया है।

बड़ी संख्या में स्तूपों के निर्माण का अर्थ यह नहीं होता कि वहाँ संरचनात्मक मंदिर, विहार या चैत्य नहीं बनाए जाते थे। हमारे पास इस संबंध में साक्ष्य तो हैं पर कोई संरचनात्मक चैत्य या विहार आज तक बचा नहीं है। कुछ महत्वपूर्ण संरचनात्मक विहारों में साँची के गजपृष्ठाकार (Appsidal) चैत्य का उल्लेख किया जा सकता है। यह वहाँ का मंदिर संख्या 18 है, जोकि एक साधारण देवालय है जिसमें आगे स्तंभ बने हैं और पीछे एक बड़ा कक्ष बना है। इसी प्रकार गुंटापल्ली के संरचनात्मक मंदिर भी उल्लेखनीय हैं।

बुद्ध की प्रतिमाओं के साथ-साथ अन्य बौद्ध प्रतिमाएँ, जैसे—अवलोकितेश्वर, पद्मपाणि, वज्रपाणि, अमिताभ और मैत्रेय जैसे बोधिसत्वों की प्रतिमाएँ भी बनाई जाने लगीं। किन्तु बौद्ध धर्म की वज्रयान शाखा के उदय के साथ, बोधिसत्वों की कुछ ऐसी प्रतिमाएँ भी जोड़ी जाने लगीं जिनके द्वारा बौद्ध धर्म के जनहित के धार्मिक सिद्धांतों के प्रचार के लिए कतिपय सद्‌गुणों का मानवीकरण करके प्रतिमा के रूप में प्रस्तुत किया गया था।

पश्चिम भारतीय गुफाएँ

पश्चिमी भारत में बहुत-सी बौद्ध गुफ़ाएँ हैं जो ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी और उसके बाद की बताई जाती हैं। इनमें वास्तुकला के मुख्यत: तीन रूप मिलते हैं—(i) गजपृष्ठीय मेहराबी छत

अधूरी निर्मित गुफ़ा, कन्हेरी

चैत्य कक्ष, कार्ला

© NCERT not to be republished

गुफ़ा सं. 3, नासिक

वाले चैत्य कक्ष (जो अजंता, पीतलखोड़ा, भज में पाए जाते हैं); (ii) गजपृष्ठीय मेहराबी छत वाले स्तंभहीन कक्ष (जो महाराष्ट्र के थाना-नादसर में मिलते हैं); और (iii) सपाट छत वाले चतुष्कोणीय कक्ष जिसके पीछे की ओर एक वृत्ताकार छोटा कक्ष होता है (जैसा कि महाराष्ट्र के कोंडिवाइट में पाया गया)। चैत्य के विशाल कक्ष में अर्द्ध-वृत्ताकार चैत्य चाप (मेहराब) की प्रधानता होती थी। सामने का हिस्सा खुला होता था जिसका मोहरा लकड़ी का बना होता था, और कुछ मामलों में बिना खिड़की वाले मेहराब पाए जाते हैं जैसा कि कोंडिवाइट में भी देखा गया है। सभी चैत्य गुफ़ाओं में पीछे की ओर स्तूप बनाना आम बात थी।

ईसा पूर्व पहली शताब्दी में, गजपृष्ठीय मेहराबी छत वाले स्तूप की मानक योजना (नक्शे) में कुछ परिवर्तन किए गए, जिसके अंतर्गत बड़े कक्ष को आयताकार बना दिया गया, जैसा कि अजंता की गुफ़ा सं. 9 में देखने को मिलता है और मोहरे के रूप में एक पत्थर की परदी लगा दी गई। ऐसा निर्माण बेदसा, नासिक, कार्ला, कन्हेरी में भी पाया जाता है। अनेक गुफ़ा स्थलों में पहले मानक किस्म के चैत्य कक्ष परवर्ती काल के भी पाए जाते हैं। कार्ला में, चट्टानों को काटकर सबसे बड़ा कक्ष बनाया गया था। गुफ़ा की योजना में पहले दो खंभों वाला खुला सहन है, वर्षा से बचाने के लिए एक पत्थर की परदी दीवार है, फिर एक बरामदा, मोहरे के रूप में पत्थर की परदी दीवार, एक खंभे पर टिकी गजपृष्ठीय छत वाला चैत्य कक्ष और अंत में पीछे की ओर स्तूप बना है। कार्ला चैत्य कक्ष (मंडप) को मनुष्यों तथा जानवरों की आकृतियों से सजाया गया है। वे भारी और चित्र के अंतराल में चलती हुई दिखाई देती हैं। कन्हेरी की गुफ़ा सं. 3 में कार्ला के चैत्य कक्ष की योजना का कुछ और विशद (विस्तृत) रूप दिखाई देता है। इस गुफ़ा के भीतरी भाग का संपूर्ण निर्माण कार्य एक साथ नहीं किया गया था इसलिए इसमें समय-समय पर संपन्न किए गए कार्य की प्रगति की झलक स्पष्ट दिखाई देती है। आगे चलकर चतुष्कोणीय चपटी छत वाली शैली को सबसे अच्छा डिज़ाइन समझा जाने लगा और यही डिज़ाइन व्यापक रूप से अनेक स्थानों पर पाया जाता है।

चैत्य, गुफ़ा सं.12, भज

जहाँ तक विहारों का सवाल है, वे सभी गुफ़ा स्थलों पर खोदे गए हैं। विहारों की निर्माण योजना (नक्शे) में एक बरामदा, बड़ा कक्ष और इस कक्ष की दीवारों के चारों ओर प्रकोष्ठ होते हैं। कुछ महत्वपूर्ण

विहार गुफ़ाएँ अजंता की गुफ़ा सं. 12, वेदसा की गुफ़ा सं. 11, नासिक की गुफ़ा सं. 3, 10 और 17 हैं। आरंभ की अनेक विहार गुफ़ाओं के भीतर से चैत्य के मेहराबों और गुफ़ा के प्रकोष्ठ द्वारों पर वेदिका डिज़ाइनों से सजाया गया है। बाद में इस तरह की सजावट को छोड़ दिया गया। नासिक की गुफ़ा सं. 3, 10 और 17 में मोहरे की डिज़ाइन में एक अलग उपलब्धि हुई। नासिक की विहार गुफ़ाओं में सामने के स्तंभों के घट-आधार और घट-शीर्ष पर मानव आकृतियाँ उकेरी गई हैं। ऐसी ही एक अन्य गुफ़ा जुन्नार (महाराष्ट्र) में भी खोदी हुई है जो आम जनता में गणेशलेनी के नाम से प्रसिद्ध है क्योंकि इसमें गणेश जी की प्रतिमा स्थापित की हुई है। आगे चलकर इस विहार के कक्ष के पीछे एक स्तूप भी जोड़ दिया गया जिससे यह एक चैत्य-विहार हो गया। ईसा की चौथी और पाँचवीं शताब्दी के स्तूपों में बुद्ध की प्रतिमाएँ संलग्न की गई हैं। जुन्नार (महाराष्ट्र) में खुदी हुई गुफ़ाओं का सबसे बड़ा समूह है। नगर की पहाड़ियों के चारों ओर 200 से भी ज़्यादा गुफ़ाएँ खुदी हुई हैं, जबकि मुंबई के पास कन्हेरी में ऐसी 108 गुफ़ाएँ हैं। गुफ़ा स्थलों में सबसे महत्वपूर्ण स्थल हैं—अजंता, पीतलखोड़ा, एलोरा, नासिक, भज, जुन्नार, कार्ला, कन्हेरी की गुफ़ाएँ। अजंता, एलोरा और कन्हेरी आज भी फल-फूल रही हैं।

अजंता

सबसे प्रसिद्ध गुफ़ा स्थल अजंता है। यह महाराष्ट्र राज्य के औरंगाबाद जिले में स्थित है और वहाँ भुसावल/जलगाँव और औरंगाबाद के रास्ते से पहुँचा जा सकता है। अजंता में कुल 26 गुफ़ाएँ हैं। इनमें से चार गुफ़ाएँ चैत्य गुफ़ाएँ हैं, जिनका समय प्रारंभिक चरण यानी ईसा पूर्व दूसरी और पहली शताब्दी (गुफ़ा सं. 10 व 9) और परवर्ती चरण यानी ईसा की पाँचवीं शताब्दी (गुफ़ा सं. 19 व 26) है। इसमें बड़े-बड़े चैत्य-विहार हैं और ये प्रतिमाओं तथा चित्रों से अलंकृत हैं। अजंता ही एक ऐसा उदाहरण है, जहाँ ईसा पूर्व पहली शताब्दी और ईसा की पाँचवीं शताब्दी के चित्र पाए जाते हैं। अजंता और पश्चिमी दक्कन की गुफ़ाओं के काल के बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता क्योंकि उनके शिलालेखों में काल-तिथि का उल्लेख नहीं मिलता।

अजंता की गुफ़ाओं का विहंगम दृश्य

© NCERT not to be republished

गुफ़ा संख्या 2 के बरामदे में उत्कीर्णित मूर्ति फलक, अजंता

गुफ़ा सं. 10, 9, 12 व 13 आरंभिक चरण की हैं, गुफ़ा सं. 11, 15 व 6 ऊपरी तथा निचली, और गुफा सं. 7 ईसा की पाँचवीं शताब्दी के उत्तरवर्ती दशकों से पहले की हैं। बाकी सभी गुफ़ाएँ पाँचवीं शताब्दी के परवर्ती दशकों से ईसा की छठी शताब्दी के पूर्ववर्ती दशकों के बीच खोदी गई हैं। चैत्य गुफ़ा सं. 19 और 26 विस्तृत रूप से उत्कीर्ण की गई हैं। उनका मोहरा बुद्ध और बोधिसत्वों की आकृतियों से सजाया गया है। वे गजपृष्ठीय तहखानेदार छत वाली किस्म की हैं। गुफ़ा सं. 26 बहुत बड़ी है और भीतर का संपूर्ण बड़ा कक्ष (मंडप) बुद्ध की अनेक प्रतिमाओं से उकेरा गया है और उनमें सबसे बड़ी प्रतिमा महापरिनिर्वाण की है। शेष सभी गुफ़ाएँ विहार-चैत्य किस्म की हैं। उनमें खम्भों वाला बरामदा, खम्भों वाला मंडप और दीवार के साथ-साथ प्रकोष्ठ बने हैं। पीछे की दीवार पर बुद्ध का मुख्य पूजा-गृह है। अजंता में पूजा स्थल की प्रतिमाएँ आकार की दृष्टि से बड़ी हैं और आगे बढ़ने की ऊर्जा के साथ प्रदर्शित की गई हैं। कुछ विहार गुफ़ाओं का कार्य अभी तक अपूर्ण है, जैसे—गुफ़ा सं. 5, 14, 23 और 24। अजंता के महत्वपूर्ण संरक्षकों में बराहदेव (गुफ़ा सं. 16 का संरक्षक) जो वाकाटक नरेश हरिसेन का प्रधानमंत्री था, उपेंद्रगुप्त (गुफ़ा सं. 17–20 का संरक्षक) जो उस क्षेत्र का स्थानीय शासक और वाकाटक नरेश हरिसेन का सामंत था तथा बुद्धभद्र (गुफ़ा सं. 26 का संरक्षक)

बुद्ध, यशोधरा एवं राहुल का चित्र, गुफ़ा संख्या 17, अजंता

अप्सरा, गुफ़ा संख्या 17, अजंता

और मथुरादास (गुफ़ा सं. 4 का संरक्षक) के नाम उल्लेखनीय हैं। गुफ़ा सं. 1, 2, 16 और 17 में अनेक चित्र आज भी शेष हैं।

चित्रों में अनेक शैली/प्रकारगत अंतर पाए जाते हैं। ईसा की पाँचवीं शताब्दी के अजंता चित्रों में बाहर की ओर प्रक्षेप दिखलाया गया है, रेखाएँ अत्यंत स्पष्ट हैं और उनमें पर्याप्त लयबद्धता देखने को मिलती है। शरीर का रंग बाहरी रेखा के साथ मिल गया है जिससे चित्र का आयतन फैला हुआ प्रतीत होता है। आकृतियाँ पश्चिमी भारत की प्रतिमाओं की तरह भारी हैं।

पहले चरण में बनी गुफ़ाओं, विशेषकर गुफ़ा संख्या 9 एवं 10 में भी चित्र पाये जाते हैं। ये ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी की हैं। इन चित्रों में रेखाएँ पैनी हैं, रंग सीमित हैं। इन गुफ़ाओं में आकृतियाँ स्वाभाविक रूप से बिना बढ़ा-चढ़ा कर अलंकृत किए हुए रंगी हैं।

चित्रित छत, गुफ़ा संख्या 10, अजंता

© NCERT not to be republished

चित्र, गुफ़ा संख्या 9, अजंता

भौगोलिक स्थान के अनुसार घटनाओं को समूहबद्ध किया गया है। सतहों में क्षैतिज तरीके से आकृतियों का नियोजन किया गया है। भौगौलिक स्थिति को वास्तु के बाहरी हिस्सों से पृथक कर दिखाया गया है। साँची की मूर्तिकला से समानता से यह स्पष्ट होता है कि किस प्रकार समसामयिक मूर्तिकला एवं चित्रकला की प्रक्रिया साथ-साथ चल रही थी। पगड़ी की आगे की गाँठ उसी प्रकार से आकृतियों में दिखाई गई है, जिस प्रकार मूर्तियों में दिखाई गई है। तथापि पगड़ियों के कुछ अलग प्रकार भी चित्रित हैं।

दूसरे चरण के चित्रों का अध्ययन गुफ़ा संख्या 10 तथा 9 की दीवारों व स्तंभ पर बने चित्रों से किया जा सकता है। बुद्ध की ये आकृतियाँ पाँचवीं शताब्दी ईसवी के चित्रों से भिन्न हैं। चित्रकला के क्षेत्र में इस प्रकार की गतिविधियों को धार्मिक आवश्यकताओं के आधार पर समझा जाना चाहिए। गुफ़ाओं का निर्माण एवं चित्रकला की गतिविधियाँ साथ-साथ एक ही समय में हुई थीं। अगले चरण के चित्र मुख्यत: गुफ़ा संख्या 16, 17, 1 और 2 में देखे जा सकते हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि अन्य गुफ़ाओं में चित्र निर्माण नहीं हुआ। वस्तुत: प्रत्येक खोदी गई गुफ़ा में चित्र बनाये गए परंतु उनमें से कुछ ही शेष रह गए। इन गुफ़ा चित्रों में प्रतीकात्मक वर्गीकरण पाया जाता है। यह भी देखा गया है कि इन चित्रों में त्वचा के लिए विभिन्न रंगों, जैसे—भूरा, पीलापन लिए हुए भूरा, हरित, पीले आदि का प्रयोग किया गया है जो भिन्न प्रकार की जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है। गुफ़ा संख्या 16 और 17 के चित्रों में सटीक और शालीन रंगात्मक

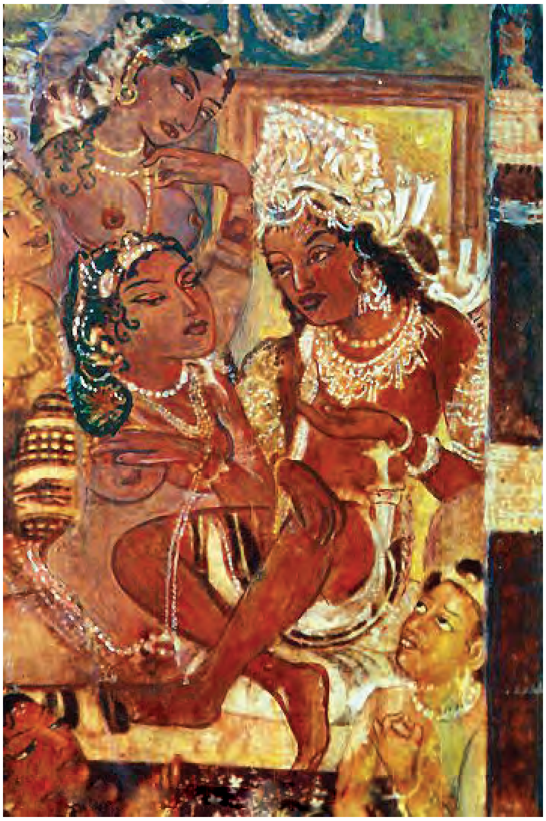

महाजनक जातक फलक का हिस्सा,
गुफ़ा संख्या 1, अजंता

© NCERT not to be republished

गुणों का प्रयोग हुआ है। इनमें गुफ़ा की मूर्तियों के समान भारीपन नहीं है। आकृतियों के घुमाव लयात्मक हैं। भूरे रंग की मोटी रेखाओं से उभार प्रदर्शित किया गया है। रेखाएं जोरदार और शक्तिशाली हैं। आकृति संयोजनों में विशिष्ट चमक देने का प्रयास किया गया है।

गुफ़ा संख्या 1 एवं 2 के चित्र सलीके से बने हुए एवं स्वाभाविक हैं जो गुफ़ा की मूर्तियों से सामंजस्य रखते हैं। वास्तु का संयोजन सामान्य है और आकृतियों को त्रि-आयामी बनाने हेतु एवं विशेष प्रभाव लाने के लिए गोलाकार संयोजन का प्रयोग किया गया है। अर्ध निर्मित, लंबी आँखें बनायी गई हैं। चित्रकारों के विभिन्न समूहों द्वारा निर्मित चित्रों की भिन्नता का पता उनकी प्रतीकात्मकता एवं शैलीगत विशेषताओं से चलता है। स्वाभाविक भंगिमाएँ एवं बढ़ा-चढ़ा कर न बनाए गए चेहरों का प्रयोग विशिष्ट रूप से किया गया है।

इन प्रतिमाओं के विषय बुद्ध के जीवन की घटनाएँ, जातक और अवदान कथाओं के प्रसंग हैं। कुछ चित्र, जैसे—सिंहल अवदान, महाजनक जातक और विधुरपंडित जातक के प्रसंग गुफ़ा की संपूर्ण दीवार को ढके हुए हैं। यह उल्लेखनीय है कि छद्दंत जातक की कथा आरंभिक काल की गुफ़ा सं. 10 पर विस्तारपूर्वक चित्रित की गई है और भिन्न-भिन्न घटनाओं को अनेक भौगोलिक स्थलों के अनुसार एक साथ रखा गया है, जैसे कि जंगल में घटित घटनाओं को राजमहल में घटित घटनाओं से अलग दिखाया गया है। गुफ़ा सं. 10 में छद्दंत का दृश्य पूरी तरह पाली पाठ का अनुसरण करता है, जबकि गुफ़ा सं. 17 में वही प्रसंग भिन्न रूप में चित्रित किया गया है। तथापि, यह द्रष्टव्य है कि पद्मपाणि और वज्रपाणि की आकृतियाँ अजंता में आम हैं और अनेक गुफ़ाओं में पाई जाती हैं

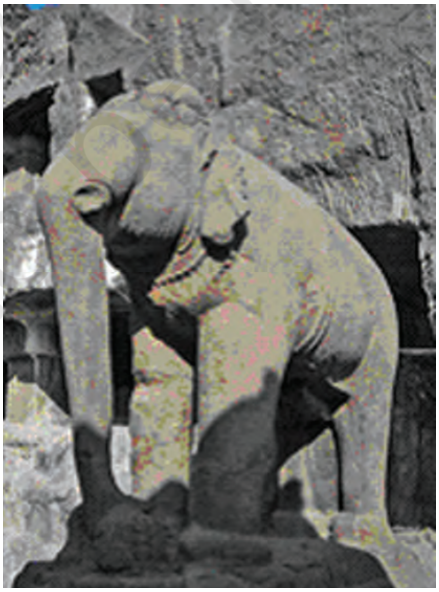

प्रांगण, कैलाश मंदिर, गुफ़ा संख्या 16, एलोरा

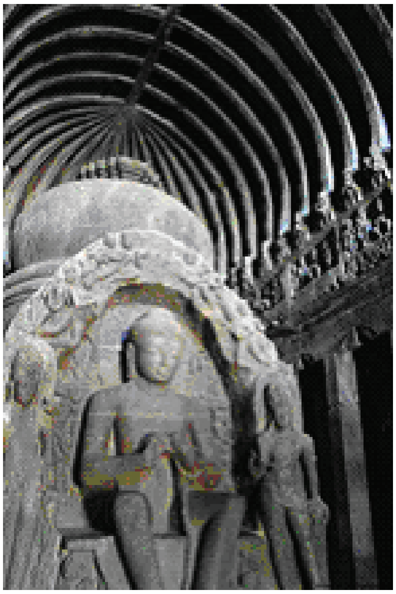

बैठे हुए बुद्ध, चैत्य कक्ष, गुफ़ा संख्या 10, एलोरा

लेकिन वे गुफ़ा सं. 1 में सर्वोत्तम रीति से सुरक्षित हैं। गुफ़ा सं. 2 की कुछ आकृतियाँ वेन्गी की प्रतिमाओं से संबंध रखती हैं जबकि दूसरी ओर, कुछ प्रतिमाओं के निरूपण में विदर्भ की मूर्तिकला का प्रभाव भी दृष्टि-गोचर होता है।

एलोरा

औरंगाबाद जिले में एक अन्य महत्वपूर्ण गुफ़ा स्थल है एलोरा। यह अजंता से 100 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है और यहाँ बौद्ध, ब्राह्मण व जैन तीनों तरह की 34 गुफ़ाएँ हैं। देश में कलाओं के इतिहास की दृष्टि से यही एक ऐसा अनुपम स्थल है जहाँ ईसा की

गजासुर वध, गुफ़ा संख्या 15, एलोरा

पाँचवीं शताब्दी से लेकर ग्यारहवीं शताब्दी तक के तीन भिन्न-भिन्न धर्मों के मठ/धर्म भवन एक साथ पाए जाते हैं। इसके अलावा यह अनेक शैलियों के संगम के रूप में भी बेजोड़ है। एलोरा और औरंगाबाद की गुफ़ाएँ दो धर्मों, विशेष रूप से बौद्ध धर्म और ब्राह्मण धर्म के बीच चल रहे अंतरों को दर्शाती हैं। वहाँ बाहर बौद्ध गुफ़ाएँ हैं, जहाँ बौद्ध धर्म के वज्रयान संप्रदाय की अनेक प्रतिमाएँ, जैसे—तारा, महामयूरी, अक्षोभ्य, अवलोकितेश्वर, मैत्रेय, अमिताभ आदि की प्रतिमाएँ प्रस्तुत की गई हैं। बौद्ध गुफ़ाएँ आकार की दृष्टि से काफ़ी बड़ी हैं और उनमें एक दो, यहाँ तक कि तीन मंजिलें हैं। उनके स्तंभ विशालकाय हैं। अजंता में भी दो मंजिली गुफ़ाएँ खुदी हुई हैं, मगर एलोरा में तीन मंजिली गुफ़ा बनाना वहाँ की विशेष उपलब्धि कही जा सकती है। ऐसी गुफ़ाओं पर प्लास्टर और रंग-रोगन किया गया था। अधिष्ठाता बुद्ध की प्रतिमाएँ आकार में बड़ी हैं और पद्मपाणि तथा वज्रपाणि की प्रतिमाएँ आमतौर पर उनके अंगरक्षक के रूप में बनाई गई हैं। गुफ़ा सं 12, जोकि एक तिमंजिली गुफ़ा

है, उसमें तारा, अवलोकितेश्वर मानुषी बुद्धों और वैरोचन, अक्षोभ्य, रत्नसंभव, अमिताभ, अमोघसिद्धि, वज्रसत्व और वज्रराज की प्रतिमाएँ उपलब्ध हैं। दूसरी ओर ब्राह्मण धर्म की तो एक ही दो मंजिली गुफ़ा यानी गुफ़ा सं. 14 है। स्तंभों के डिजाइन बौद्ध गुफ़ाओं में बनने शुरू हुए थे और जब वे विकसित होते-होते नौवीं शताब्दी की जैन गुफ़ाओं में पहुंचे तो वे अत्यंत अलंकृत हो गए और उनके सज्जात्मक रूप में भारी उभार आ गया।

ब्राह्मणिक गुफ़ा सं 13–28 में अनेक प्रतिमाएँ पाई जाती हैं। उनमें से कई गुफ़ाएँ शैव धर्म को समर्पित हैं परंतु उनमें शिव और विष्णु तथा पौराणिक कथाओं के अनुसार उनके अवतारों की प्रतिमाएँ प्रस्तुत की गई हैं। शैव कथा-प्रसंगों में कैलाश पर्वत को उठाए हुए रावण, अंधकासुर वध, कल्याण-सुंदर जैसे प्रसंग स्थान-स्थान पर चित्रित किए गए हैं जबकि वैष्णव कथा-प्रसंगों में विष्णु के विभिन्न अवतारों को दर्शाया गया है। एलोरा की प्रतिमाएँ अतिविशाल हैं, उनका आयतन बाहर निकला हुआ है जो चित्र की परिधि में गहराई उत्पन्न करता है। प्रतिमाएँ भारी हैं और उनमें मूर्तिकला का शानदार प्रदर्शन किया गया है। एलोरा में अनेक कलाकार भिन्न-भिन्न स्थलों, जैसे—विदर्भ (महाराष्ट्र), कर्नाटक, तमिलनाडु आदि से आए थे और उन्होंने प्रतिमाओं को उकेरा था। इसलिए मूर्तिकला की शैलियों की दृष्टि से भारत में इसे अनेक शैलियों का संगम स्थान कहा जा सकता है। गुफ़ा सं. 16 को कैलाश लेनी कहा जाता है। यहाँ केवल एक अकेली गुफ़ा को काटकर एक शैल मंदिर बनाया गया है। इसे वास्तव में कलाकारों की एक अनुपम उपलब्धि कहा जा सकता है, इस पर अगले अध्याय में भी चर्चा की जाएगी। महत्वपूर्ण शैव गुफ़ाओं में गुफ़ा सं. 29 और 21 उल्लेखनीय हैं। गुफ़ा सं. 29 की योजना मुख्य रूप से एलिफैंटा जैसी ही है। गुफ़ा सं. 29, 21, 17, 14, और 16 की मूर्ति कलात्मक विशेषता विशालता, स्मारकीयता और चित्र में प्रदर्शित गतिशीलता की दृष्टि से आश्चर्यजनक है।

एक अन्य उल्लेखनीय गुफ़ा स्थल बाघ है। बौद्ध भित्ति-चित्रों वाली बाघ गुफ़ाएँ मध्य प्रदेश के धार जिला मुख्यालय से 97 कि.मी. की दूरी पर स्थित हैं। ये गुफ़ाएँ प्राकृतिक नहीं हैं, अपितु चट्टानों को काटकर बनायी गई हैं। ये प्राचीन समय में सातवाहन काल में बनायी गईं थीं। अजन्ता जैसी बाघ गुफ़ाओं का निर्माण कुशल शिल्पकारों द्वारा सीधे बलुए पत्थर पर किया गया है जिसका मुख बघानी नामक मौसमी नदी की तरफ है। आज, मूल नौ गुफ़ाओं में से केवल पाँच गुफ़ाएँ बची हैं जिसमें से सभी भिक्षुओं के विहार या चतुष्कोण वाले विश्राम स्थान हैं। इनमें लघु कक्षों के पीछे चैत्य अर्थात् प्रार्थना कक्ष होता है। इन पाँच गुफ़ाओं में सबसे महत्वपूर्ण गुफ़ा सं. 4 है, जिसे आमतौर पर रंगमहल के नाम से जाना जाता है जहाँ दीवार और छत पर चित्र अभी भी दिखाई देते हैं। गुफ़ा संख्या 2, 3, 5 एवं 7 में भी दीवारों और छतों पर भित्ति-चित्रों को देखा जा सकता है। इसमें लाल-भूरे रंग के पत्थर के किरकिरे से तैयार मोटे पलस्तर से इन दीवारों और छतों को बनाया गया था। इनमें सबसे सुन्दर चित्रों में से कुछ गुफ़ा संख्या 4 के बरामदे की दीवारों पर हैं। भारतीय शास्त्रीय कला को और अधिक हानि न हो इसलिए 1982 में इन चित्रों को ग्वालियर के पुरातात्विक संग्रहालय में पुनःस्थापित किया गया जिन्हें वहाँ देखा जा सकता है।

© NCERT not to be republished

एलिफैंटा गुफ़ा द्वार

एलिफ़ैंटा एवं अन्य स्थल

मुंबई के पास स्थित एलिफ़ैंटा गुफ़ाएँ शैव धर्म से संबंधित हैं। ये गुफ़ाएँ एलोरा की समकालीन हैं और इनकी प्रतिमाओं में शरीर का पतलापन नितांत गहरे और हल्के प्रभावों के साथ दृष्टि-गोचर होता है।

चट्टानों में काटी गई गुफ़ाओं की परंपरा दक्कन में जारी रही। वे गुफ़ाएँ महाराष्ट्र में ही नहीं बल्कि कर्नाटक में चालुक्य राजाओं के संरक्षण में मुख्य रूप से बादामी व ऐहोली में तथा आन्ध्र प्रदेश के विजयवाड़ा क्षेत्र में और तमिलनाडु में पल्लव राजाओं के संरक्षण में मुख्यत: महाबलीपुरम् में पाई जाती हैं। देश में ईसा की छठी शताब्दी के बाद कला इतिहास का विकास राजनीतिक स्तर पर अधिक हुआ जबकि इससे पहले के ऐतिहासिक कालों में वह जनता के सामूहिक संरक्षण में अधिक फला-फूला था।

यहाँ मिट्टी की छोटी-छोटी आकृतियों का उल्लेख कर देना भी समीचीन होगा जो देश भर में स्थान-स्थान पर पाई गई हैं। उनसे यह प्रकट होता है कि पत्थर की धार्मिक मूर्तिकला की परंपरा के साथ-साथ समानांतर रूप से स्वतंत्र स्थानीय परंपरा भी चलती रही थी। पकी मिट्टी की अनेक प्रतिमाएँ भिन्न-भिन्न छोटे-बड़े आकारों में सर्वत्र पाई गई हैं जिससे उनकी लोकप्रियता का पता चलता है। उनमें से कुछ खिलौने हैं, कुछ छोटी-छोटी धार्मिक आकृतियाँ हैं और कुछ विश्वास के आधार पर कष्टों तथा पीड़ाओं के निवारण के लिए बनाई गईं लघु मूर्तियाँ हैं।

पूर्वी भारत की गुफ़ा परम्परा

पश्चिमी भारत के समान, पूर्वी भारत में भी विशेषकर आन्ध्र प्रदेश और ओडिशा के तटीय क्षेत्रों में बौद्ध गुफ़ाओं का निर्माण हुआ। आन्ध्र प्रदेश में एलुरू जिले में स्थित गुंटापल्ली इनमें से एक प्रमुख स्थल है। मठों की संरचना के साथ पहाड़ों में गुफ़ाओं का निर्माण हुआ

© NCERT not to be republished

उदयगिरि-खंडगिरि गुफ़ा, भुवनेश्वर के समीप

है। सम्भवत: यह एक ऐसा विशेष स्थल है जहाँ स्तूप, विहार एवं गुफ़ाओं का एक स्थान पर निर्माण हुआ है। गुंटापल्ली के चैत्य की गुफ़ा गोलाकार है एवं प्रवेश द्वार चैत्य के रूप में बना है। पश्चिमी भारत की अन्य गुफ़ाओं की तुलना में ये गुफ़ाएँ छोटी हैं। विहार गुफ़ाओं का निर्माण अधिक संख्या में हुआ है। अधिक छोटी होने के बावजूद मुख्य विहार गुफ़ाएँ बाहर से चैत्य तोरणों से सजी हैं। ये गुफ़ाएँ आयताकार हैं जिनकी छतें मेहराबदार हैं, जो बिना बड़े कक्ष के एक मंजिली या दो मंजिली हैं। इनका निर्माण ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में हुआ था। इसके बाद के काल में कुछ विहार गुफ़ाओं का निर्माण हुआ। गुंटापल्ली के अतिरिक्त रामपरेमपल्लम् एक अन्य महत्वपूर्ण स्थल है, जहाँ पहाड़ी के ऊपर चट्टान

बरामदा, उदयगिरि-खंडगिरि

को काटकर एक छोटे स्तूप का निर्माण हुआ है। विशाखापट्टनम् (आंध्र प्रदेश) के समीप अनकापल्ली में गुफ़ाओं का निर्माण हुआ और चौथी-पाँचवीं शताब्दी ईसवी में पहाड़ी के ऊपर चट्टानें काटकर एक बड़ा-सा स्तूप बनाया गया। यह एक ऐसा विशिष्ट स्थल है जहाँ चट्टान काटकर देश के सबसे बड़े स्तूप का निर्माण हुआ। इस पहाड़ी के चारों ओर पूजा करने के लिए अनेक स्तूपों का निर्माण किया गया।

ओडिशा में भी चट्टान काटकर गुफ़ा बनाने की परम्परा रही। खंडगिरि-उदयगिरि इसके सबसे आरंभिक उदाहरण हैं जो भुवनेश्वर के समीप स्थित हैं। ये गुफ़ाएँ फैली हुई हैं जिनमें खारवेल जैन राजाओं के शिलालेख पाए जाते हैं। शिलालेखों के अनुसार, ये गुफ़ाएँ जैन मुनियों के लिए थीं। इनमें से कई मात्र एक कक्ष की बनी हैं। कुछ गुफ़ाओं को बड़ी चट्टानों में पशु का आकार देकर बनाया गया है। बड़ी गुफ़ाओं में आगे स्तंभों की कड़ी बनाकर बरामदे के पिछले भाग में कक्षों का निर्माण किया गया है। इन कक्षों के प्रवेश का ऊपरी भाग चैत्य तोरणों और आज भी प्रचलित स्थानीय लोक गाथाओं के संदर्भ से सुसज्जित है।

अभ्यास

1. साँची के स्तूप संख्या 1 की भौतिक एवं सौंदर्य विशिष्टताओं का वर्णन करें।
2. पाँचवीं एवं छठी शताब्दी ईसवी में उत्तर भारत मूर्तिकला की शैलीगत प्रवृत्तियों का विश्लेषण करें।
3. भारत के विभिन्न भागों में गुफ़ा आश्रयों से एलोरा के एकाश्म मंदिर तक वास्तुकला का विकास किस प्रकार हुआ?
4. अजंता के भित्ति-चित्र क्यों विख्यात हैं?

© NCERT not to be republished

स्तूप सं. 1, साँची

भोपाल (मध्य प्रदेश) से लगभग 50 किलोमीटर की दूरी पर स्थित साँची यूनेस्को द्वारा घोषित एक विश्व धरोहर/विरासत स्थल है। यहाँ अनेक छोटे-बड़े स्तूप हैं जिनमें से तीन मुख्य हैं अर्थात् स्तूप सं. 1, स्तूप सं. 2 और स्तूप सं. 3। ऐसा माना जाता है कि स्तूप सं. 1 में बुद्ध के अवशेष हैं; स्तूप सं. 2 में उनसे कम प्रसिद्ध उन 10 अर्हतों के अवशेष हैं जो तीन अलग-अलग पीढ़ियों के थे, उनके नाम उनकी अवशेष पेटिकाओं पर लिखे हुए हैं और स्तूप सं. 3 में सारिपुत्त और महामौग्गलायन के अवशेष रखे हैं।

स्तूप सं. 1 जो नक्काशी के लिए प्रसिद्ध है, स्तूप वास्तुकला का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। अपने मूल रूप में यह स्तूप एक ईंटों का छोटा ढाँचा था जो आगे चलकर बड़ा बना दिया गया और पत्थर, वेदिका और तोरण (द्वार) से सुसज्जित कर दिया गया। अशोक सिंह शीर्ष स्तंभ, एक शिलालेख के साथ इस स्तूप के दक्षिण की ओर पाया जाता है, जिससे पता चलता है कि साँची में मठीय एवं कलात्मक क्रियाकलाप केंद्र के रूप में गतिविधि कैसे प्रारंभ हुई। सबसे पहले दक्षिण की ओर प्रवेश द्वार बनाया गया, उसके बाद अन्य द्वार बने। स्तूप के चारों ओर प्रदक्षिणा पथ भी है, ऐसा प्रदक्षिणा पथ इसी स्थल पर पाया जाता है और कहीं नहीं। स्तूप के चारों द्वार स्वयं बुद्ध के जीवन की विभिन्न घटनाओं और महत्वपूर्ण घटना-स्थलों पर अशोक के जाने के बारे में ऐतिहासिक आख्यानों से संबंधित दृश्यों से पूरी तरह सजे हुए हैं। बुद्ध को प्रतीकात्मक रूप से खाली सिंहासन, पद, छत्र, स्तूप आदि के साथ दिखाया गया है। चारों दिशाओं में तोरण बने हुए हैं। इनकी शैलियों में अंतर पाया जाता है जिससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इनके निर्माण का समय ईसा पूर्व पहली शताब्दी और उसके बाद का है। स्तूप सं. 1 सबसे पुराना स्तूप है लेकिन स्तूप सं. 2 की वेदिका पर जो आकृतियाँ उकेरी गई हैं, वे स्तूप सं. 1 से पहले की हैं। जातक इन आख्यानों के महत्वपूर्ण अंग हैं। वेस्सात जातक, शम जातक, महाकवि जातक, छन्द जातक उन महत्वपूर्ण जातकों में से हैं जो स्तूप के तोरणों और स्तंभों पर चित्रित किए गए हैं। साँची स्तूपों पर पाई जाने वाली आकृतियाँ, आयाम में छोटी होते हुए भी मूर्तिकला की कुशलता दर्शाती हैं। उनमें शरीर के अंग-प्रत्यंग का जो रूपाकृतिक चित्रण किया गया है, वो गहराई और आयाम दोनों ही दृष्टियों से अत्यंत स्वाभाविक है। संयोजन भीड़-भाड़ भरा है और आकृतियों की परस्पर व्याप्ति से जो थोड़ा खाली स्थान बच जाता है, उसका यहाँ पूर्ण अभाव है। मुद्रात्मक मोड़ों से शरीर की गति दर्शायी गई है। उनकी हलचल में संरचनात्मक समरसता और अभिन्नता देखने को मिलती है। स्तंभों पर संरक्षक आकृतियाँ हैं और शालमंजिका (पेड़ की शाखा पकड़े हुए स्त्री) की आकृतियाँ आयतन के प्रस्तुतीकरण में बेजोड़ हैं। स्तूप संख्या 2 की पहले वाली प्रतिमाओं जैसी कठोरता इनमें दिखाई नहीं देती। प्रत्येक तोरण में दो सीधे खड़े स्तंभ और उनकी चोटी पर तीन आड़ी दंडिकाएं हैं। प्रत्येक आड़ी दंडिका आगे से पीछे तक भिन्न-भिन्न प्रतिमा विषयों से अलंकृत है। नीचे की दंडिका से भी आगे तक बढ़ी हुई आड़ी दंडिका पर शालमंजिकाओं की आकृतियाँ बनी हुई हैं।

पद्मासन में बुद्ध, कटरा टीला, मथुरा

© NCERT not to be republished

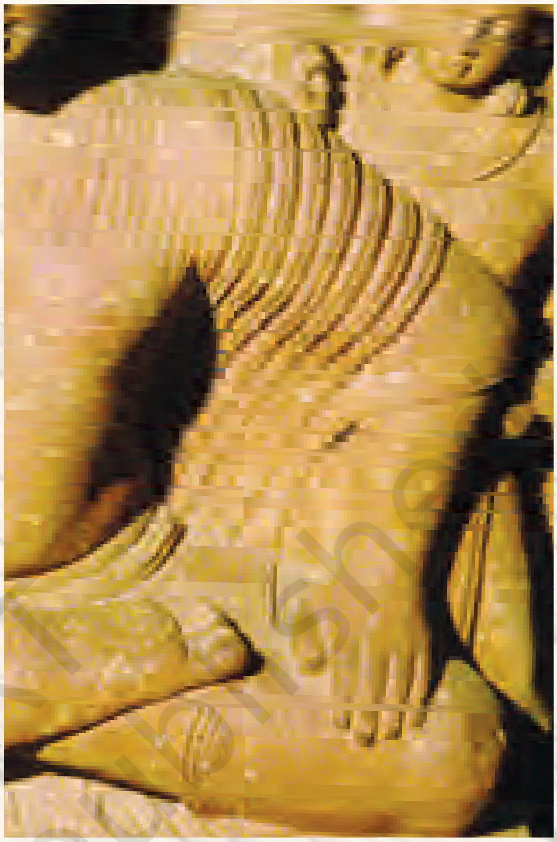

आरंभिक ऐतिहासिक काल में मथुरा मूर्ति उत्पादन का एक विशाल केंद्र था और वहाँ से कई मूर्तियाँ मिली हैं। कुशाण काल तक की जो पुरानी मूर्तियाँ मिली हैं, उनमें मथुरा से मिली मूर्तियों की संख्या भी काफ़ी अधिक है। मथुरा में मूर्ति बनाने का तरीका अलग किस्म का था इसलिए यहाँ पाई गई मूर्तियाँ देश के अन्य भागों में बनी मूर्तियों से भिन्न हैं। कटरा टीले से मिली बुद्ध की प्रतिमा ईसा की दूसरी शताब्दी की है। इसमें बुद्ध को दो सहायक बोधिसत्वों के साथ दिखाया गया है। बुद्ध पद्मासन में (पालथी भरकर) बैठे हुए हैं और उनका दाहिना हाथ अभय मुद्रा में कंधे के स्तर से कुछ ऊपर उठा हुआ और बायाँ हाथ बाईं जांघ पर रखा हुआ दिखाया गया है। ऊष्णीय यानी केश ग्रंथि को सिर पर सीधा उठा हुआ दिखाया गया है। मथुरा की मूर्तियाँ इस काल से हल्के आयतन और मांसल शरीर के साथ बनाई गई हैं, कंधे चौड़े हैं। संघति (पोशाक) एक ही कंधे को ढकती है और उसे खासतौर से बाएँ हाथ से ढकते हुए दिखाया गया है जबकि संघति का स्वतंत्र भाग जो वक्षस्थल को ढके हुए है शरीर के धड़ तक ही रखा गया है। बुद्ध सिंहासन पर विराजमान दिखाए गए हैं। साथ की आकृतियों को पद्मपाणि और वज्रपाणि बोधिसत्वों के रूप में पहचाना जाता है क्योंकि एक के हाथ में पद्म (कमल) और दूसरे के हाथ में वज्र है और वे मुकुट पहने हुए बुद्ध की दोनों ओर स्थित हैं। बुद्ध के सिर के चारों ओर जो प्रभामंडल दिखाया गया है वह बहुत बड़ा है और संकेंद्रिक वृत्त में सरल ज्यामितीय आकृतियाँ दिखाई गई हैं। प्रभामंडल के ऊपर कोणीय रूप से उड़ती हुई दो आकृतियाँ दिखाई गई हैं। वे चित्र की सीमा के भीतर काफ़ी गति दर्शाती हैं। आकृतियों में पूर्व की कठोरता के स्थान पर नम्यता आ गयी जिसने उन्हें अधिक पार्थिव रूप दे दिया। शरीर के मोड़ों को इतनी सुकोमलता के साथ उकेरा गया है कि मानों वह नारी आकृति हो। यही मथुरा के मूर्तिकारों द्वारा निर्मित पुरुष और स्त्री आकृतियों का विशिष्ट अंतर दर्शाती है। पद्मासन लगाकर सीधे बैठे हुए बुद्ध की प्रतिमा रिक्त स्थान में गति उत्पन्न करती है। चेहरा मांसल कपोलों के साथ गोल है। पेट को कुछ आगे निकला हुआ दिखाया गया है लेकिन वह नियंत्रित है। यह ज्ञातव्य है कि मथुरा में कुशाण काल की प्रतिमाओं के अनेक नमूने मिले हैं परन्तु यह मूर्ति परवर्ती कालों में बुद्ध की प्रतिमा के विकास को समझने की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है।

© NCERT not to be republished

बुद्धमुख की प्रतिमा, तक्षशिला

© NCERT not to be republished

आज के पाकिस्तान के प्राचीन गांधार क्षेत्र में स्थित तक्षशिला से प्राप्त बुद्ध की प्रतिमा ईसा की दूसरी शताब्दी के कुशाण काल की है। यह प्रतिमा गांधार काल में विकसित अनेक चित्रात्मक परिपाटियों का मिला-जुला रूप है। प्रतिमा के स्वरूप में कई यूनानी-रोमन तत्व पाए जाते हैं। बुद्ध के शीर्ष में अनेक यूनानी किस्म के तत्व हैं जो समय के साथ विकसित हुए हैं। बुद्ध के घुंघराले केश घने हैं और सिर को तेज और रेखीय परत से ढके हुए हैं। मस्तक समतल है और उसमें बड़ी-बड़ी पुतलियों वाली आँखें अधमिची दिखाई गई हैं। चेहरा और कपोल भारत के अन्य भागों में पाई गईं प्रतिमाओं की तरह गोल नहीं है। गांधार क्षेत्र की आकृतियों में कुछ भारीपन दिखाई देता है। कान और विशेष रूप से उनके लटके हुए भाग (ललरी) लंबे हैं। रूप के प्रस्तुतीकरण में रैखिकता है और बाहरी रेखाएं तीखी हैं। सतह समतल है। आकृति बहुत भावाभिव्यंजक है। प्रकाश और अंधेरे के पारस्परिक प्रभाव पर पर्याप्त ध्यान दिया गया है जिसके लिए नेत्र-कोटरों को मोड़कर तलों और नाक के तलों का उपयोग किया गया है। प्रशांतता की अभिव्यक्ति आकर्षण का केंद्र बिंदु बन गयी है। मुखमंडल प्रतिरूपण त्रि-आयामिता की स्वाभाविकता बढ़ा रहा है। एकेमेनियाई, पार्थियाई और बैक्ट्रियाई परम्पराओं की विभिन्न विशेषताओं का स्थानीय परंपरा के साथ सम्मिलन गांधार शैली की एक प्रमुख विशेषता है। गांधार शैली की प्रतिमाओं में यूनानी-रोमन परंपरा के रूपाकृतिक लक्षण पाए जाते हैं परंतु उनमें अंगों-प्रत्यंगों का प्रस्तुतीकरण कुछ ऐसा भी है जिसे पूरी तरह यूनानी-रोमन नहीं कहा जा सकता। अनेक बुद्ध तथा अन्य प्रतिमाओं के विकास के स्रोत उनकी विशिष्ट पश्चिमी एवं पूर्वी शैली में देखे जा सकते हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि भारत का पश्चिमोत्तर भाग जो पाकिस्तान में चला गया है, आद्य-ऐतिहासिक काल से ही लगातार बसा हुआ रहा है। ऐतिहासिक काल में भी यह सदा आबाद रहा। गांधार क्षेत्र से बड़ी संख्या में मूर्तियाँ पाई गई हैं। ये मूर्तियाँ बुद्ध और बोधिसत्वों की हैं और उनमें बुद्ध के जीवन की घटनाओं तथा जातक कथाओं का प्रस्तुतीकरण किया गया है।

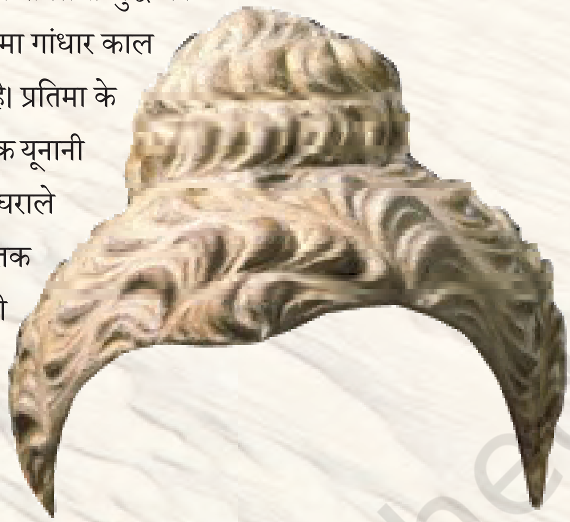

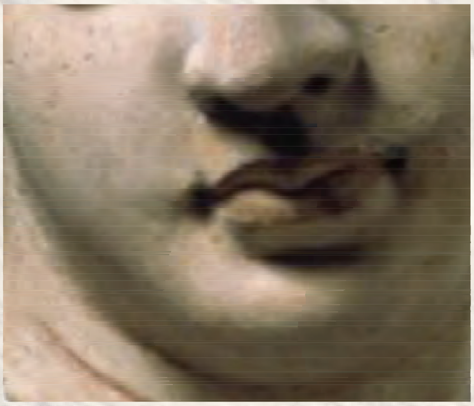

आसनस्थ बुद्ध, सारनाथ

बुद्ध की यह प्रतिमा ईसा की पाँचवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की है जो सारनाथ से मिली थी और अब सारनाथ के स्थलीय संग्रहालय में सुरक्षित है। यह चुनार के बलुआ पत्थर से बनी हुई है। इसमें बुद्ध को पद्मासन लगाए हुए सिंहासन पर विराजमान दिखाया गया है। यह धम्मचक्रप्रवर्तन के प्रसंग का प्रतिरूपण है, जैसा कि सिंहासन पर बैठी हुई अन्य आकृतियों में देखा जा सकता है। बीच में एक छात्र और दो हिरण मानव आकृतियों के साथ दिखाए गए हैं। इस प्रकार इस ऐतिहासिक घटना को प्रस्तुत किया गया है।

बुद्ध की यह प्रतिमा सारनाथ शैली की प्रतिमाओं का एक उत्तम उदाहरण है। शरीर पतला और संतुलित है, लेकिन कुछ लंबा दिखाया गया है। बाह्य रेखाएं सुकोमल और अत्यंत लयबद्ध हैं। चित्र के स्थान में दृश्य संतुलन बनाने के लिए मुड़ी हुई टांगों को सीधा दिखाया गया है। अंग-वस्त्र शरीर से लिपटा हुआ है और एकीकृत आयतन का प्रभाव उत्पन्न करने के लिए पारदर्शी है। चेहरा गोल है, आँखे आधी मिची हैं। नीचे का होंठ आगे बढ़ा हुआ है। कुषाण काल की मथुरा से प्राप्त पहले वाली प्रतिमाओं की तुलना में कपोलों की गोलाई कम हो गई है। हाथ धम्मचक्रप्रवर्तन की मुद्रा में छाती से नीचे रखे दिखाए गए हैं। गर्दन कुछ लंबी है। इस पर दो कटी रेखाएँ हैं जो बलन (मोड़) की सूचक हैं। ऊष्णीय गोलाकार घुंघराले केशों से बना है। प्राचीन भारत में मूर्तिकारों का उद्देश्य सदैव बुद्ध को एक ऐसे महामानव के रूप में प्रस्तुत करना था जिन्होंने निर्वाण यानी क्रोध एवं घृणा से छुटकारा प्राप्त कर लिया था। सिंहासन के पृष्ठभाग को एक संकेंद्रिक वृत्त में भिन्न-भिन्न फूलों और बेलों के नमूनों से अत्यंत अलंकृत दिखाया गया है। प्रभामंडल का केंद्रीय भाग सादा-समतल है, वहाँ कोई सज्जा नहीं की गई है। इससे प्रभामंडल देखने में बहुत प्रभावशाली बन गया है। प्रभामंडल के भीतर और सिंहासन की पीठ पर की गई सजावट कलाशिल्पी की संवेदनशीलता और विशेष सज्जा के चयन की सूचक है। इस काल की सारनाथ बुद्ध की प्रतिमाएँ सतह और आयतन दोनों के प्रस्तुतीकरण में पर्याप्त कोमलता दर्शाती हैं। अंगवस्त्र की पारदर्शिता शरीर का हिस्सा बन गई है। ऐसा परिष्कार आने में काफ़ी समय लगा होगा और ये लक्षण आगे भी जारी रहे।

सारनाथ में खड़ी मुद्रा वाले बुद्ध की और भी बहुत-सी मूर्तियां मिली हैं जिनका वस्त्र पारदर्शी दिखाया गया है, गति एक समान है तथा उन्हें धर्मराजिका स्तूप के चारों ओर अलग-अलग उकेरा गया है और ये सारनाथ के संग्रहालय में रखी हुई हैं। इनमें से कुछ तो अकेले बुद्ध की हैं और कुछ में बुद्ध को बोधिसत्व पद्मपाणि और वज्रपाणि के साथ दर्शाया गया है।

पद्मपाणि बोधिसत्व
अजंता, गुफ़ा सं. 1

गुफ़ा संख्या 2, अजंता

यह चित्र अजंता की गुफ़ा संख्या 1 में पूजागृह से पहले स्थित आंतरिक बड़े कक्ष की पिछली दीवार पर चित्रित है। इनमें बोधिसत्व को एक पद्म (कमल) पकड़े हुए दिखाया गया है। उनके कन्धे बड़े हैं। शरीर में तीन मोड़ हैं जिनसे चित्र में गति उत्पन्न हुई दिखाई देती है। प्रतिरूपण सुकोमल है, बाहरी रेखाएँ शरीर के आयतन में विलीन प्रतीत होती हैं जिससे त्रिआयामिता का प्रभाव उत्पन्न होता है। बोधिसत्व एक बड़ा मुकुट पहने हुए हैं जिसमें विस्तृत चित्रकारी दृष्टिगोचर होती है। सिर थोड़ा-सा बाईं ओर झुका है। आँखें आधी मिची हैं और कुछ लंबी बनाई गयी हैं। नाक तीखी और सीधी है। चेहरे के सभी उभरे हुए हिस्सों पर हल्का रंग किया गया है जिसका उद्देश्य त्रि-आयामिता का प्रभाव उत्पन्न करना है। मनकों वाले हार में भी ऐसी ही विशेषता पाई जाती है। चौड़े और फैले हुए कंधे शरीर में भारीपन उत्पन्न करते हैं, धड़ का भाग अपेक्षाकृत गोलाकार है। रेखाएँ कोमल और लयबद्ध हैं और शरीर की परिरेखा को दर्शाती हैं। दाहिने हाथ में एक कमल पुष्प है और बायां हाथ खाली जगह पर बढ़ा हुआ है। बोधिसत्व के चारों ओर अन्य कई छोटी-छोटी आकृतियाँ बनी हैं।

बाहर की ओर निकले हुए रंगीन खंड (ब्लॉक) चित्र के आयाम में गहराई का प्रभाव उत्पन्न करते हैं। बोधिसत्व का आगे की ओर कुछ निकला हुआ दायाँ हाथ आकृति को अधिक ठोस और प्रभावी रूप से गहन बनाता है। धड़ भाग के ऊपर का धागा आयाम दर्शाने वाली शुंडाकार रेखाओं के साथ दिखाया गया है। शरीर के प्रत्येक भाग के चित्रण पर पूरा ध्यान दिया गया है। हल्के लाल, भूरे, धूसर, हरे और नीले रंगों का प्रयोग किया गया है। नाक का उभार, होंठों का कटा हुआ कोना, आगे बढ़ा हुआ निचला होंठ और छोटी ठुड्डी, सब मिलकर आकृति की रचना में ठोसपन (एकरूपता) का प्रभाव लाने में योगदान दे रहे हैं। गुफा सं 1 के चित्र अच्छी किस्म के हैं और उन्हें ठीक से रखा गया है। अजंता के चित्रों में कुछ प्रकारात्मक और शैलीगत विभिन्नताएं देखी जा सकती हैं, जिनसे ऐसा प्रतीत होता है कि अजंता की गुफ़ाओं में कई शताब्दियों के दौरान कला-शिल्पियों की भिन्न-भिन्न श्रेणियों ने चित्रण का कार्य किया था।

पद्मपाणि की उपर्युक्त आकृति के दूसरी ओर वज्रपाणि बोधिसत्व को चित्रित किया गया है। वज्रपाणि दाहिने हाथ में वज्र लिए हुए और सिर पर मुकुट पहने हुए हैं। इस आकृति में भी वो सब चित्रात्मक विशेषताएं पाई जाती हैं जो ऊपर पद्मपाणि के बारे में बताई गई हैं, जैसे—महाजनक जातक, उमंग जातक आदि। महाजनक जातक की कथा संपूर्ण दीवार पर चित्रित की हुई है और यह सबसे बड़ा आख्यान चित्र है। ऐसा प्रतीत होता है कि पद्मपाणि और वज्रपाणि तथा बोधिसत्वों के चित्रों को इस पवित्र स्थल के अभिरक्षक के रूप में चित्रित किया गया है। अजंता की अन्य गुफ़ाओं में भी ऐसे ही पद्मपाणि और वज्रपाणि के चित्र सर्वोत्तम चित्र माने जाते हैं।

महाजनक जातक के चित्र
गुफ़ा संख्या 1, अजंता

मार विजय, अजंता, गुफ़ा सं. 26

मार विजय का विषय अजंता की कई गुफ़ाओं में चित्रित किया गया है। यही एक मूर्तिकलात्मक प्रतिरूपण है जिसे अजंता की गुफा संख्या 26 की दाहिनी दीवार पर प्रस्तुत किया गया है। यह मूर्ति बुद्ध की महापरिनिब्बाण की विशाल प्रतिमा के पास में बनाई गई है। मूर्ति फलक में बुद्ध की आकृति को बीच में मार की पुत्री और सेना से घिरा हुआ दिखाया गया है। यह घटना बुद्ध के ज्ञानोदय का हिस्सा है। इसमे सिद्धार्थ के उस मानसिक संक्षोभ की स्थिति का मानवीकरण किया गया है जिससे होकर बुद्ध को बुद्धत्व-प्राप्ति (ज्ञानोदय) के समय गुज़रना पड़ा था। मार काम यानि इच्छा का द्योतक है। आख्यान के अनुसार, बुद्ध और मार के बीच संवाद होता है और बुद्ध को अपने दाहिने हाथ से धरती की ओर अपनी उदारता के प्रति एक साक्षी के रूप में इशारा करते हुए दिखाया गया है। यह उभरा हुआ प्रतिमा फलक अत्यंत जीवंत है और अजंता की अतिपरिपक्व मूर्तिकला का उदाहरण है। यह रचना अनेक छोटी-बड़ी प्रतिमाओं के साथ प्रस्तुत की गई है। आकृति के दाहिने ओर मार को अपनी विशाल सेना के साथ आते हुए दिखाया गया है। उसकी सेना में तरह-तरह के आदमी ही नहीं बल्कि विकृत चेहरों वाले अनेक जानवर भी हैं। निचले आधार में संगीतकारों के साथ नाचती हुई आकृतियों की कमर आगे निकली हुई दिखाई गई है। एक नाचती हुई आकृति ने अपने हाथों को नृत्य की मुद्रा में आगे बढ़ा रखा है। बाईं ओर निचले सिरे पर मार की प्रतिमा को यह सोचते हुए दिखाया गया है कि सिद्धार्थ (बुद्ध) को कैसे विचलित किया जाए। फलक के आधे हिस्से में मार की सेना को बुद्ध की ओर बढ़ते हुए दिखाया गया है, जबकि फलक के निचले आधे हिस्से में मार की सेना को बुद्ध की आराधना करके वापस लौटते हुए दिखाया गया है। बीच में बुद्ध पद्मासन लगाकर विराजमान हैं और उनके पीछे एक घनी पत्तियों वाला वृक्ष दिखाया गया है। मार के सैनिकों के चेहरे की कुछ विशेषताएँ विदर्भ शैली की प्रतिमाओं की विशेषताओं से मिलती-जुलती हैं। अजंता की गुफ़ाओं में कलाशिल्पियों की भिन्न-भिन्न श्रेणियों ने काम किया था इसलिए वहाँ की शैलीगत विशेषताओं के अवलोकन से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि अमुक प्रतिमा अमुक शैली के शिल्पियों द्वारा बनाई गई होगी। हालांकि अजंता की गुफाओं में और भी कई बड़ी प्रतिमाएँ हैं जो खासतौर पर पूजा कक्ष में और अग्रभाग की दीवारों पर हैं परन्तु प्रतिमाओं का ऐसा जटिल विन्यास बेजोड़ है। दूसरी ओर चित्रित फलकों में भी अनेक विन्यास में ऐसी ही जटिलताएँ देखने को मिलती हैं। एक फलक में नाचती हुई आकृतियों का ऐसा ही विन्यास औरंगाबाद की गुफ़ाओं में भी देखा जा सकता है।

एलिफ़ैंटा की महेशमूर्ति

एलिफ़ैंटा की महेशमूर्ति ईसा की छठी शताब्दी के प्रारंभिक काल में बनाई गई थी। यह गुफ़ा के मुख्य देवालय में स्थापित है। पश्चिमी दक्कन की मूर्तिकला की परंपरा शैलकृत गुफ़ाओं में मूर्ति निर्माण की गुणात्मक उपलब्धि का एक उत्तम उदाहरण है। यह मूर्ति आकार में काफ़ी बड़ी है। इसका बीच का सिर शिव की मुख्य मूर्ति है और दोनों ओर के दृश्यमान सिर भैरव और उमा के हैं। बीच का चेहरा (शिव का) अधिक उभरा हुआ और गोल है, होंठ मोटे हैं और पलकें भारी हैं। नीचे के होंठ उभरे हुए हैं जो इस मूर्ति की एक अलग विशेषता है। इसमें शिव का सर्वसमावेशी पक्ष दर्शाया गया है। इसमें इसका प्रतिरूपण कोमल है, सतह समतल व चिकनी है और चेहरा बड़ा है। शिव-भैरव के पार्श्व-मुख को गुस्से में, बाहर निकली आँख और मूँछ के साथ दिखाया गया है। तीसरा चेहरा नारी मुख है, जो शिव के एक साथ पाँच मुख होने का उल्लेख है। इस प्रतिमा में वैसे तो शिव के तीन मुख ही दिखाई देते हैं, पर हो सकता है कि पीछे की ओर के दो मुख अदृश्य रखे गए हों। प्रत्येक सिर पर मूर्तिकलात्मक विद्यमानता के अनुसार एक अलग किस्म का मुकुट रखा गया है। यह मूर्ति गुफ़ा की दक्षिणी दीवार पर बनाई गई है। इसके साथ शिव के दो अन्य रूपों—अर्द्धनारीश्वर और गंगाधर—की मूर्तियाँ सतह की समतल चिकनाई, लंबाई और लयबद्ध गति जैसी विशेषताओं के लिए जानी जाती हैं। उनकी रचना (संयोजन) बहुत जटिल है। इस गुफ़ा का मूर्ति-विन्यास एलोरा की गुफ़ा सं. 29 में दोहराया गया है।

क.

ख.

ग.

घ.

क. अनंत, अनंतपद्मनाभ मंदिर, कसरगोड़

ख. वाराह को मारते हुये शिव—किरातार्जुनीय प्रकरण, लेपाक्षी मंदिर

ग. चोल नरेश राजराज एवं राज कवि करूवरदेवेर, तंजावुर, ग्यारहवीं शताब्दी

घ. त्रिपुरासुर वध करते हुए शिव, तंजावुर

ङ. रावण वध करते हुए राम, रामायणपट्ट, मत्तनचेरी महल

च. शास्त, पद्मनाभपुरम्, थक्कल

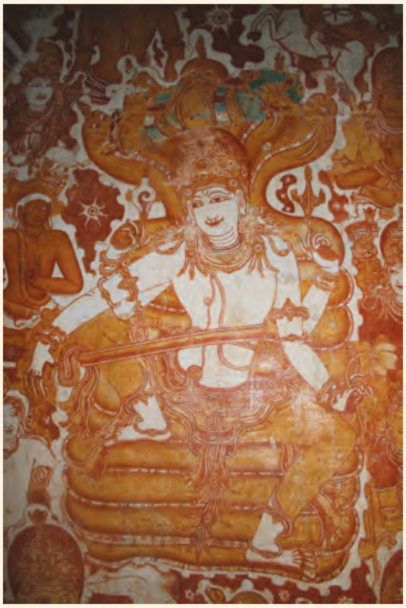

ङ.

च.